पंडित दीनदयाल जी का आर्थिक दर्शन

डॉ. आशीष गोयल

असिसटेंट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, आर्य महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाहजहांपुर

विकासोंमुख भारतीय अर्थनीति की दिशा की ओर संकेत अनेक बार किया जा चुका है। यह निश्चित है कि काफी लंबे अर्से से परागति की ओर जानेवाली व्यवस्था को प्रगति की दिशा में बदलने के लिए प्रयास करने होंगे। स्वतरू वह ह्रास से विकास की ओर नहीं मुड़ सकती। वास्तव में जब कोई व्यवस्था शिथिल हो जाती है तो उसके स्वतरू सुधार का सामर्थ्य जाता रहता है। विकास की शक्तियों का प्रादुर्भाव होने एवं गति देने के लिए योजनापूर्वक प्रयास करने पड़ते हैं। स्वतंत्र देश के शासन के ऊपर स्वाभाविक रूप से यह जिम्मेवारी आती है।

अपने इस दायित्व का निर्वाह करने के लिए योजना और नीतियों के निर्धारण की आवश्यकता होती है। किंतु शासन कई बार गलती कर जाता है। वह अर्थ–व्यवस्था को गति देने के स्थान पर स्वयं ही उसका अंग बनकर खड़ा हो जाता है। इस प्रयास में उसे उन लक्ष्यों और उद्देश्यों का भी विस्मरण हो जाता है जिनको लेकर उसने अपने प्रयत्न प्रारंभ किए थे।

अर्थ–व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन संपूर्ण जनता के नाम पर 'पीपुल्स डेमोक्रेसी' के नामाभिधान से तानाशाही चलावे और चाहे वह सही माने में प्रतिनिधि शासन हो, जनता का स्थान नहीं ले सकता। वह जनता का मार्गदर्शन कर सकता है, सहायक बन सकता है, उसका नियंत्रण कर सकता है, आदेश दे सकता है, उसे गुलाम बना सकता है। इनमें से उसे किस रूप में व्यवहार करना है इस पर ही उसकी योजनाओं की मर्यादाएँ और स्वरूप निर्भर करेंगे।

नियोजन का स्वरूप

शनियोजनश शब्द का पहले रूस द्वारा व्यवहार होने के कारण उसे साम्यवादी अर्थ–व्यवस्था का आवश्यक अंग ही नहीं, नियोजित अर्थनीति का अपरिहार्य परिणाम भी साम्यवाद माना जाता है। किंतु आज नियोजन साम्यवादियों तक सीमित नहीं। अमेरिका और ब्रिटेन भी नियोजन में विश्वास करते हैं। पर रूस और इन देशों की नियोजन की कल्पलाएँ भिन्न–भिन्न हैं। चूँकि साम्यवादी देश एक अत्यंत ही सूत्रबद्ध योजना बनाए तथा संपूर्ण आर्थिक गतिविधियों, उत्पादन, वितरण और उपभोग का पूरी तरह नियंत्रण करें। इसके विपरीत प्रजातंत्रवादी अपने विशेष दृष्टिकोण के कारण ही बहुत अधिक नियंत्रित योजना को, यदि वह, आर्थिक कारणों से संभव भी हो, नहीं अपनाएँगे। इसी आधार पर सन् 1948 में ब्रिटेन की चतुवर्षीय योजना में लिखा थायूनाइटेड किंगडम का आर्थिक नियोजन इन मूलभूत तथ्यों पर आधारित है आर्थिक तथ्य कि यू.के. की अर्थव्यवस्था अंतरराष्ट्रीय व्यापार पर अत्यधिक निर्भर है, राजनीतिक तथ्य कि वह (यू.के.) एक प्रजातंत्र है और रहेगाय तथा

प्रशासनिक तथ्य कि कोई भी नियोजक भावी आर्थिक विकास की सामान्य प्रवृत्तियों से अधिक का ज्ञान नहीं रख सकता।

नियोजन और प्रजातंत्र

आर्थिक नियोजन में यह अंतिम तथ्य अत्यधिक महत्त्व का है। जब कोई भी मनुष्य किसी जीवनमान एवं विकासशील अर्थव्यवस्था के भावी व्यवहार के संबंध में भविष्यवाणी करता है तो वह केवल अपने अनुभवों एवं कल्पनाओं के आधार पर ही कुछ अनुमान लगाता है। यह निश्चित नहीं कि वे पूरी तरह सत्य उतरें। अतरू उसे उनमें सदैव परिवर्तन के लिए तैयार रहना चाहिए। किंतु तानाशाही शासन परिवर्तन स्वीकार करने के स्थान पर अर्थ की गतियों को अपनी भविष्यवाणी के अनुसार बदलने का आग्रह करता है। उसमें से संकट पैदा होते हैं।

इसी प्रकार जब कोई नियोजक योजना के विभिन्न प्रकार संबद्ध अंगों में संभाव्य परिवर्तनों के लिए गुंजाइश छोड़कर नहीं चलता तो विभिन्न प्रकारों के संकट खड़े हो जाते हैं। उन्हें टालने के लिए शासन अधिकाधिक शक्ति अपने हाथ में लेता जाता है। रूस आदि साम्यवादी देशों में यदि पहला प्रकार दिखता है तो भारत में दूसरा। एक में तानाशाही ही अर्थनीति का नियंत्रण करती है तो दूसरे में अर्थनीति की कठिनाइयां तानाशाही को जन्म दे रही हैं। हमें दोनों से बचना होगा। मानव–ज्ञान की इन सीमाओं के अतिरिक्त भी नियोजन की मर्यादाएँ जीवन के अन्य मूल्यों के आधार पर निश्चित करनी पड़ती हैं।

जहां शासन ही संपूर्ण अर्थोत्पादन कर स्वामी है वहाँ योजना बनाना और कार्यान्वित करना सरल है। जहाँ व्यक्तियों को आर्थिक क्षेत्र में खुली छूट है वहाँ भी अधिक कठिनाई नहीं, किंतु जहाँ एक मिश्रित अर्थ–व्यवस्था है वहाँ नियोजन एक दुष्कर कार्य है। उदाहरण के लिए जहाँ केवल सैन्य–संचालन का कार्य करना है वह सरलता से किया जा सकता है।

नीति और नियोजन

प्रजातंत्रीय देशों में शासन मौद्रिक एवं वित्तीय नीतियों, अंतरराष्ट्रीय व्यापार के नियंत्रण आदि से अर्थ–व्यवस्था की गतिविधियों को ठीक रखता है। उनका नियोजन नीति–निधार्रण, बजट आदि तक सीमित रहता है। वे एक–एक क्षेत्र और एक–एक इकाई की गतिविधि की चिंता नहीं करते। इसे हम बृहत् आर्थिक नियोजन कह सकते हैं। इसके विपरीत जहाँ छोटे–छोटे लक्ष्यों का निर्धारण तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म आर्थिक गतिविधियों का नियोजन किया जाए उसे अणु–आर्थिक नियोजन कहेंगे।

रूस दूसरी पद्धति का पालन करता है तो अमेरिका और ब्रिटेन पहली का। हमने दोनों का मेल बिठाने की कोशिश की है किंतु पूर्ण समाजवाद न होने के कारण दूसरा असफल होता है तो सार्वजनिक क्षेत्र का अत्यधिक विस्तार होने के कारण पहला प्रभावी नहीं हो पाता।

आवश्यकता है कि शासन अपने हाथ में बहुत ही थोड़े एवं अपरिहार्य उद्योग ले तथा शेष का नियंत्रणों के द्वारा नियमन करता चला जाए।

उस समय तक भारत में दो योजनाएँ बनी थी। पहली तो केवल कुछ स्कीमों का संकलन मात्र था, किंतु दूसरी देश के आर्थिक ढाँचे में मूलभूत परिवर्तन न करने की योजना बनाई गई। राष्ट्रीय आय में पच्चीस प्रतिशत की वृद्धि, विषमताओं की कमी, मूल तथा भारी उद्योगों के विकास पर बल देते हुए देश का तेजी से औद्योगीकरण तथा रोजगारों का अधिक विस्तार, ये लक्ष्य इस योजना के सम्मुख रखे गए थे। इन्हें प्राप्त करने के लिए चार हजार आठ सौ करोड़ रुपए के व्यय का अनुमान किया गया है।

समाजवाद के उद्देश्य के अनुरूप शासन के द्वारा तीन हजार आठ सौ करोड़ रुपए तथा निजी–क्षेत्र में एक हजार चार सौ करोड़ रुपए के पूँजी–विनियोजन की व्यवस्था थी। साधन की दृष्टि से यह अनुमान लगाया गया था कि आठ सौ करोड़ रुपए करों से, एक हजार दो सौ करोड़ रुपए ऋण से, आठ सौ करोड़ रुपए विदेशों से, चार सौ करोड़ रुपए बजट के अन्य सूत्रों से, एक हजार दो सौ करोड़ रुपए घाटे की अर्थ–व्यवस्था से प्राप्त किया जाएगा। शेष चार सौ करोड़ रुपए की कमी कैसे पूरी की जाएगी इसका कोई विधान नहीं किया गया था।

जब यह योजना बनाई गई थी तो इसे अत्यंत महत्त्वाकांक्षिणी तथा उपलब्ध साधनों से बाहर की बताया गया था। साथ ही कृषि की उपेक्षा करके औद्योगीकरण पर और उसमें भी भारी अद्योगों पर बल गलत था। देश की बेकारी के उन्मूलन की इसमें कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। शासन ने अपनी क्षमता से अधिक भारत अपने ऊपर ले लिया था। करों का भार दुर्वह होगा आदि पिछले ढाई वर्ष के अनुभव ने इन आलोचनाओं को सत्य सिद्ध किया है।

योजना आयोग ने मई 1958 में जो योजना के क्रियांवयन का सिंहावलोकन किया है उसके अनुसार उपर्युक्त आंकड़ों और अनुमान में बदल हुआ है। अब राजस्व की आय से बचत सात सौ इक्यावन करोड़ रुपए, रेलों से दो सौ पचास रुपए, ऋण से नौ सौ चवअन करोड़ रुपए, अन्य स्रोतों से उनतीस करोड़ रुपए, विदेशों से एक हजार उन्नचालीस करोड़ रुपए घाटे की अर्थ–व्यवस्था से एक हजार दो सौ करोड़ रुपए का अनुमान लगाया गया है। इस प्रकार का कुल आय का अनुमान चार हजार दो सौ साठ करोड़ रुपए का होता है। अतरू योजना को घटाकर चार हजार पाँच सौ करोड़ रुपए की करने का सुझाव रखा गया। नवंबर 1958 के आयोग के एक नोट के अनुसार चार हजार पाँच सौ करोड़ रुपए भी जुटाना संभव नहीं होगा। अतरू घटाकर चार हजार दो सौ चालीस करोड़ किया जाए, ऐसा सुझाव रखा गया। आवंटनों में भी अनेक परिवर्तन किए गए। राष्ट्रीय विकास परिषद् ने उसके सुझावों को अमान्य किया है।

योजना के लक्ष्यों और अनुमानों की गलतियाँ हैं, यद्यपि यदि थोड़ा अधिक ध्यान दिया जाता तो उन्हें काफी सुधारा जा सकता था। किंतु हमारे देश में आंकड़ों के एकत्रीकरण और विवेचन की न तो कोई अच्छी, विश्वसनीय एवं अविलंबकारी व्यवस्था है, और न शासन की लाल फीताशाही में वह संभव ही है। महत्त्व का प्रश्न तो यह है कि यदि ये अंदाजे ठीक भी निकल जाते तो भी योजना से भारत की समस्याएँ सुलझाना तो दूर रहा, उसका सामर्थ्य प्राप्त करने की दिशा में भी हम आगे नहीं बढ़ पाते।

योजना की मौलिक गलती

योजना की सबसे बड़ी गलती है उसके द्वारा भारत की परिस्थितियों पर विचार न किया जाना। उसने न तो भारत के साधनों का विचार किया और न उसकी आवश्यकताओं का। वह रूस और यूरोप के औद्योगीकरण के अनुकरण का एक क्षीण प्रयास मात्र है। उसमें भी इन देशों के सम्मुख औद्योगीकरण के काल में और उसके परिणामस्वरूप जो समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं उनका भी विचार नहीं किया गया।

विभिन्न परियोजनाओं और क्षेत्रों के बीच न तो संतुलन बिठाया गया और न समन्वय ही। किसी भी योजना की पूर्ति के लिए धन ही नहीं, भौतिक और मानवी साधनों की आवश्यकता है। हमारा संपूर्ण ध्यान धन की प्राप्ति के स्रोत ढूँढ़ना और उसके व्यय की मात्रा के अनुसार सफलता को कम से कम व्यय से अधिकतम लाभ का विचार ही भूल गए। जहाँ हमें मानवीय विकास का लक्ष्य रखना चाहिए था, वहाँ हमने भौतिक लक्ष्य रखे और उनका आधार भी वित्तीय लक्ष्य मान लिया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दीनयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय– (भाग एक), संपादक– डॉ. महेश चंद्र शर्मा, प्रकाशक–प्रभात प्रकाशन, प्रथम संस्करण 25 सितम्बर 2016, पुनर्मुद्रण– जनवरी 2017 पृष्ठ–– 121 से 207
2. ऋतम्भरा 2015–16 (सांस्कृति एवं शैक्षिक उन्नयन में प्रदेश का अग्रणी महाविद्यालय– विक्रमाजीत सिंह सनातन धर्म कालेज, कानपुर की वार्षिक पत्रिका) में प्रकाशित निबंध– ''दीनदयालजी और उनका चिन्तन" लेखक– डॉ. श्याम बाबू गुप्त, निदेशक– दीनदयाल शोध केन्द्र, छात्रपति शाहू जी महराज विश्वविद्यालय, कानपुर के सौजन्य से, पृष्ठ – 71 से 73
3. ऋतम्भरा 2015–16 (सांस्कृति एवं शैक्षिक उन्नयन में प्रदेश का अग्रणी महाविद्यालय– विक्रमाजीत सिंह सनातन धर्म कालेज, कानपुर की वार्षिक पत्रिका) में प्रकाशित निबंध– ''दीनदयालजी और उनका चिन्तन" लेखक– डॉ. श्याम बाबू गुप्त,

निदेशक– दीनदयाल शोध केन्द्र, छत्रपति शाहू जी महराज विश्वविद्यालय, कानपुर के सौजन्य से, – पृष्ठ 72

4. ऋतम्भरा 2015–16 (सांस्कृति एवं शैक्षिक उन्नयन में प्रदेश का अग्रणी महाविद्यालय– विक्रमाजीत सिंह कालेज, कानपुर की वार्षिक पत्रिका) में प्रकाशित निबंध– 'सांस्कृतिक राष्ट्रवादः दीनदयाल उपाध्याय लेखक– डॉ. राकेश शुक्ल, एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, तेज, कानपुर के सौजन्य से, पृष्ठ – 74 से 76